Swami Vivekananda Advanced Journal for Research and Studies
Online Copy of Document Available on: www.svajrs.com

ISSN:2584-105X Pg. 142-147

भारत को स्वतंत्र कराने में आर्यसमाज का योगदान

डॉ. आशीष यादव
प्राध्यापक, शिक्षा विभाग (उत्तर प्रदेश सरकार), मोबाइल न. 8010565561

Accepted: 22/10/2025
Published: 28/10/2025 *DOI: http://doi.org/10.5281/zenodo.17728777*

सारांश

यह शोधपत्र भारत के स्वतंत्रता संग्राम में आर्यसमाज के विविध योगदानों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित इस आंदोलन ने सामाजिक और धार्मिक सुधारों के साथ-साथ स्वराज्य और राष्ट्रीय चेतना का बीजारोपण किया। अध्ययन में आर्यसमाज की शैक्षिक, सामाजिक और राष्ट्रवादी गतिविधियों, स्त्री-उत्थान प्रयासों, तथा स्वदेशी और स्वतंत्रता आंदोलनों में उसकी भूमिका का उल्लेख किया गया है। लाला लाजपत राय, स्वामी श्रद्धानन्द, और रामप्रसाद बिस्मिल जैसे नेताओं की प्रेरणा के रूप में आर्यसमाज ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष को बल दिया और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को वैचारिक दिशा प्रदान की।

मुख्य शब्द *- आर्यसमाज, भारत का स्वतंत्रता संग्राम, स्वराज्य, राष्ट्रवाद, सामाजिक सुधार, स्वदेशी आंदोलन, वैदिक राष्ट्रवाद, स्त्री शिक्षा, शुद्धि आंदोलन।*

प्रस्तावना

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इन आंदोलनों में *आर्यसमाज* (स्थापना: 1875) का योगदान अत्यंत विशिष्ट रहा है। आर्यसमाज की नींव स्वामी दयानन्द सरस्वती ने एक सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के रूप में रखी, परंतु इसके सिद्धांतों और गतिविधियों ने देश में राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत कर स्वतंत्रता के लिए वातावरण तैयार किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती उन प्रथम नेताओं में से थे जिन्होंने औपनिवेशिक शासन का खुलकर विरोध किया और *स्वराज्य* (स्वशासन) का स्पष्ट आह्वान किया। ऐतिहासिक तथ्यों, सामाजिक प्रभावों और राजनीतिक योगदान – तीनों ही दृष्टियों से आर्यसमाज ने भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने के संघर्ष में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस शोध-पत्र में आर्यसमाज के इसी बहुआयामी योगदान का विश्लेषण किया गया है, जिसमें स्वामी दयानन्द के राष्ट्रवादी विचार, आर्यसमाज द्वारा किए गए सामाजिक सुधार एवं शिक्षात्मक प्रयास, और स्वतंत्रता संग्राम के विभिन्न चरणों में आर्यसमाज से जुड़े नेताओं व क्रांतिकारियों की भूमिका का अध्ययन सम्मिलित है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्वराज्य संदेश और राष्ट्रवाद की नींव

स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824–1883) को आधुनिक भारत के निर्माताओं में गिना जाता है (Radhakrishnan, 2005)। उन्होंने 1875 में आर्यसमाज की स्थापना करते समय केवल धार्मिक सुधार ही नहीं, अपितु देशभक्ति और राष्ट्रवाद का भी बीजारोपण किया। 1876 में स्वामी दयानन्द ने सर्वप्रथम *"स्वराज्य"* अर्थात् भारत में भारतीयों के शासन की मांग की और "इंडिया फॉर इंडियंस" (अर्थात् *"भारत भारतवासियों के लिए है"*) का नारा दिया था (Chaddha, 2024)। यह उस समय की क्रांतिकारी घोषणा थी जब अधिकांश भारतीय नेता ब्रिटिश राज के प्रति सीधी चुनौती देने से बचते थे। स्वामी दयानन्द अपने लेखन और प्रवचनों में विदेशी शासन की कटु आलोचना करते थे और ज़ोर देते थे कि विदेशी शासन भारत का भला नहीं कर सकता। उन्होंने स्पष्ट कहा कि विदेशी सत्ता कभी भी भारत में न्याय और समृद्धि नहीं ला सकती (Arya Samaj)।

स्वामी दयानन्द ने ब्रिटिश शासन द्वारा लगाए गए अन्यायपूर्ण करों का भी विरोध किया। उदाहरणस्वरूप, महात्मा गांधी के 1930 के नमक सत्याग्रह से लगभग 70 वर्ष पूर्व ही स्वामी दयानन्द ने ब्रिटिशों के नमक कर का विरोध किया था (Arya Samaj)। अंग्रेज़ी सामानों के बहिष्कार (*बहिष्करण*) का सिद्धांत, जो आगे चलकर *स्वदेशी आंदोलन* का आधार बना, उसे भी स्वामी दयानन्द ने उन्नीसवीं शताब्दी में ही प्रोत्साहित किया। इन विचारों से स्पष्ट है कि दयानन्द सरस्वती ने भारत में राष्ट्रवादी विचारधारा की नींव रख दी थी। इंडोलॉजिस्ट एनी बेसेन्ट ने भी स्वीकार किया कि "स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने लिखा कि 'India is for Indians' अर्थात् 'भारत भारतवासियों के लिए है'" (Chaddha, 2024)। यह कथन दर्शाता है कि दयानन्द के विचारों ने आगे चलकर भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के आदर्श व लक्ष्य को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया।

दयानन्द सरस्वती न केवल एक साधु या समाज-सुधारक थे, बल्कि एक जागृत राष्ट्रवादी थे जिन्होंने भारतीयों में आत्मसम्मान जगाया। उन्होंने 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद की पीढ़ी को मानसिक, सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से जागृत करने का कार्य किया (Chaddha, 2024)। उन्होंने देश के विभिन्न राजाओं, नवाबों को भी राष्ट्रहित में एकजुट होने का संदेश दिया। स्वामी दयानन्द ने अपने एक वक्तव्य में कहा था, *"मैं राजाओं और महाराजाओं को सही मार्ग पर लाना चाहता हूँ तथा आर्य जाति को एक सूत्र में बाँधना चाहता हूँ"* (Singh)। इस प्रकार, उन्होंने भारतीय रियासतों के शासकों को विलासिता त्यागकर जनकल्याण और राष्ट्रसेवा के पथ पर चलने की प्रेरणा दी। उदाहरणत:, उन्होंने उदयपुर के महाराणा को *मनुस्मृति* एवं *महाभारत* में वर्णित नीतिशास्त्र की शिक्षा दी, जिसका उन पर गहरा प्रभाव पड़ा। जोधपुर के महाराजा एवं अधिकारियों को दयानन्द ने विदेशी कपड़ों के त्याग और देशी खादी वस्त्र अपनाने के लिए प्रेरित किया, जिसके परिणामस्वरूप जोधपुर दरबार में राजा से लेकर कर्मचारियों तक सभी खादी पहनने लगे थे (Singh, n.d.)। यह घटना 1870 के दशक की है, जब देश में स्वदेशी की लहर भी नहीं उठी थी – परंतु मारवाड़ क्षेत्र दयानन्द के प्रभाव से पहले ही खादी में दीखने लगा था। स्वामी दयानन्द के इन्हीं राष्ट्रवादी प्रयासों के चलते ब्रिटिश हुकूमत भी सतर्क हो गई थी और उन्हें एक चुनौती मानने लगी थी। उनके देहांत (1883) के बाद भी आर्यसमाज ने उनके स्वदेशी तथा स्वराज्य संबंधी अपूर्ण कार्यों को आगे बढ़ाया।

सामाजिक सुधार और राष्ट्रीय चेतना का उदय

आर्यसमाज मूलत: एक समाज-सुधार आंदोलन था, जिसके दस मुख्य सिद्धांत सामाजिक पुनर्जागरण पर केंद्रित थे। स्वामी दयानन्द ने *सत्यार्थ प्रकाश* (1875) तथा अन्य रचनाओं में मूर्तिपूजा, जाति-अंधविश्वास, बाल-विवाह आदि कुरीतियों का विरोध किया और प्राचीन वैदिक ज्ञान पर आधारित एक समतामूलक समाज की परिकल्पना प्रस्तुत की। इन सामाजिक सुधारों का स्वतंत्रता आंदोलन से घनिष्ठ संबंध था: सामाजिक जागृति ने भारतीयों में आत्मविश्वास भरा और औपनिवेशिक सत्ता द्वारा फैलाए गए हीनभावना के माहौल को तोड़ा। जवाहरलाल नेहरू ने उल्लेख किया है कि *"आर्यसमाज ने लड़कों और लड़कियों दोनों में शिक्षा के प्रसार, स्त्रियों की स्थिति सुधारने तथा दलित वर्गों का स्तर उठाने में बहुत अच्छा कार्य किया है"* (Nehru, as cited in Singh)। नेहरू के इस कथन से प्रतिविम्बित होता है कि आर्यसमाज द्वारा आरंभ किए गए शैक्षिक और सामाजिक सुधार भारत को आधुनिक राष्ट्र के रूप में खड़ा करने में सहायक बने।

विशेषकर शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्वामी दयानन्द ने नारी शिक्षा और सबके लिए निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की वकालत की, जब ऐसा सोचना भी साहस की बात थी। उनका मत था, *"राज्य तथा समाज दोनों का कर्तव्य है कि पांचवे या आठवें वर्ष के बाद सभी बालकों-बालिकाओं को विद्यालय भेजना अनिवार्य करें; उस आयु के बाद बच्चे को घर पर रखने को दंडनीय अपराध बनाया जाना चाहिए"* (स्वामी दयानन्द, उद्धृत) – यह बात उन्होंने 1870 के आसपास कही थी, जो गोखले के सर्वप्रस्ताव (1910 के दशक) से दशकों पूर्व की है। दयानन्द के जीवनकाल में ही आर्यसमाज ने फ़र्रूख़ाबाद, काशी, मेरठ आदि स्थानों पर कई पाठशालाएँ खोलीं, यद्यपि धनाभाव के कारण प्रारंभ में कुछ बंद भी हुईं। परन्तु दयानन्द की मृत्यु के पश्चात् उनके अनुयायियों ने शैक्षिक प्रसार को आंदोलन का प्रमुख अंग बनाया। 1886 में लाहौर में *दयानन्द एंग्लो-वैदिक विद्यालय* (DAV School) की स्थापना लाला हंसराज ने महर्षि दयानन्द की स्मृति में की, जो आगे चलकर एक कॉलेज और फिर अनेक विद्यालयों-विश्वविद्यालयों की श्रृंखला बन गई। 1886 से 1918 के बीच आर्यसमाज ने भारत में 500 से अधिक शिक्षण संस्थान स्थापित किए (Singh), जिनमें गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार, स्थापित 1902, स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा) जैसे गुरुकुल, कन्या महाविद्यालय, अनाथालय, विधवा आश्रम एवं तकनीकी विद्यालय शामिल थेvedictemple.org। इन संस्थानों की विशेषता थी कि ये ब्रिटिश सरकार की सहायता से स्वतंत्र रहते थे और पूर्णतः भारतीय धन एवं प्रबंधन से संचालित होते थे। इन शैक्षिक संस्थानों में राष्ट्रभक्ति का भाव पाठ्यक्रम और गतिविधियों का अभिन्न अंग था – छात्रों में स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग, मातृभाषा (खासकर हिंदी) तथा प्राचीन संस्कृति के सम्मान को प्रोत्साहित किया जाता था (Arya Samaj)। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने आर्यसमाज के शिक्षा क्षेत्र के इन प्रयासों की प्रशंसा करते हुए कहा था कि आर्यसमाज ने स्त्री-शिक्षा, नारी उत्थान और दलितोद्धार में जो योगदान किया, वह उल्लेखनीय है। शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ आर्यसमाज ने स्त्री अधिकारों हेतु भी आवाज़ उठाई – विधवा पुनर्विवाह, बाल-विवाह निषेध, स्त्री शिक्षा, और पर्दा-प्रथा उन्मूलन जैसे सुधारों को आर्यसमाज ने सामाजिक स्वीकार्यता दिलाने में बड़ी भूमिका निभाई। आर्यसमाज के प्रयासों से भारत में एक *नवजागरण* (Renaissance) आया जिसने जनता को मानसिक रूप से स्वतंत्रता के लिए तैयार किया।

इन सामाजिक सुधारों का राजनीतिक प्रभाव यह हुआ कि भारतीय समाज आत्मसम्मान के साथ खड़ा होने लगा। अंग्रेज शासकों द्वारा भारतीय सभ्यता की निंदा एवं ईसाई मिशनरियों द्वारा हिंदू धर्म की आलोचना का आर्यसमाज ने वैचारिक उत्तर दिया, जिससे लोगों में अपनी संस्कृति के प्रति गर्व का भाव पैदा हुआ। आर्यसमाज के प्रवक्ताओं और वैदिक मिशनरियों ने दूर-दराज़ तक जाकर लोगों में राष्ट्रभक्ति की ज्वाला जगाई। उन्होंने धर्म और राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधते हुए कहा कि भारत की स्वतन्त्रता धर्म की रक्षा हेतु भी आवश्यक है। उदाहरणस्वरूप, पंजाब और उत्तर भारत में आर्यसमाज के उपदेशकों ने हिंदू समाज को सक्रिय और संगठित किया। इसका असर ब्रिटिश सेना के भारतीय सिपाहियों तक पर पड़ा – उनके मध्य भी आज़ादी की भावना प्रसारित होने लगी थी। ब्रिटिश अधिकारियों को जब यह भनक लगी तो उन्होंने 1910 के दशक में आदेश निकाल दिया कि *"किसी भी आर्य को सैनिक छावनियों के भीतर प्रवेश न करने दिया जाए"* तथा सेना में आर्यसमाजी लोगों की भर्ती पर भी रोक लगाने का प्रयास हुआ (Singh)। यह ब्रिटिश राज की उस डर को दर्शाता है जो आर्यसमाज द्वारा फैलती देशभक्ति की लहर से उन्हें महसूस होने लगा था।

राष्ट्रीय आंदोलन में आर्यसमाज की राजनीतिक भूमिका

यद्यपि आर्यसमाज स्वयं को एक राजनीतिक दल के रूप में स्थापित नहीं करता था, तथापि 20वीं शताब्दी के आरंभ तक ब्रिटिश सरकार इसे एक "राजनीतिक संगठन" की दृष्टि से देखने लगी थी। कई सरकारी नौकरों को केवल आर्यसमाज का सदस्य होने के कारण नौकरी से निकाला गया (उदाहरणतः शिक्षा विभाग के कुछ अध्यापक)। इसका मुख्य कारण यह था कि आर्यसमाजियों ने देशभक्ति से ओतप्रोत सामाजिक आंदोलनों को जन्म दिया जो औपनिवेशिक शासन को चुनौती देते थे। आर्यसमाज का स्पष्ट मत था कि राजनैतिक स्वतंत्रता के बिना पूर्ण सामाजिक सुधार संभव नहीं है, अतः स्वराज्य अनिवार्य है (Arya Samaj)। आर्यसमाज ने 1905 के बंग-भंग के विरोध में प्रारंभ हुए स्वदेशी आंदोलन को वैचारिक आधार प्रदान किया और अपने मंच से विदेशी वस्त्रों व वस्तुओं के बहिष्कार का प्रचार किया। 1894 में लाहौर में आर्यसमाज के सदस्यों ने *स्वदेशी वस्तु प्रचारणी सभा* की स्थापना की, जिसने *स्वदेशी वस्तु प्रचारक* नामक द्विभाषी (अंग्रेज़ी-हिंदी) पत्र निकाला (Singh)। लाला लाजपत राय, जो स्वयं प्रमुख आर्यसमाजी थे, ने पंजाब में *पंजाबी स्वदेशी एसोसिएशन* बनाकर स्वदेशी के संदेश को घर-घर पहुँचाया। इन प्रयासों से स्वदेशी आंदोलन को उत्तर भारत में अभूतपूर्व बल मिला, जिससे ब्रिटिश अर्थव्यवस्था को सीधा धक्का पहुँचा और राष्ट्रवाद को व्यापक जनसमर्थन मिला।

इसके अतिरिक्त, आर्यसमाज ने हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि के प्रसार में भी बड़ा योगदान दिया, जो राष्ट्रीय एकता के लिए महत्वपूर्ण था। पंजाब में आर्यसमाज ने उर्दू-फ़ारसी लिपि की बजाय हिंदी-देवनागरी को बढ़ावा दिया, जिससे हिंदी राष्ट्रीय आंदोलन की संपर्क भाषा बन सकी। इसके कारण आर्यसमाज को कुछ विरोध भी झेलने पड़े (जैसे कुछ मुस्लिम और सिख समूहों से मतभेद हुए), किन्तु व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखें तो आर्यसमाज ने उत्तर भारत में हिंदी तथा वैदिक संस्कृति के पुनर्जागरण द्वारा एक ऐसे सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को जन्म दिया जिसने लोगों को विदेशी शासन के विरुद्ध एकजुट किया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कई अग्रणी नेता आर्यसमाज की पृष्ठभूमि से थे या उससे प्रभावित थे। *लाला लाजपत राय* (1865–1928) इसका सर्वोत्तम उदाहरण हैं – वे आर्यसमाज

के सक्रिय नेता थे और कांग्रेस के उग्रपंथी गरम दल के प्रमुख स्तंभ बने। लाला लाजपत राय ने स्वयं स्वीकार किया था: *"स्वामी दयानन्द ने मुझे आत्मिक बल प्रदान किया; मैं उनका 'मानस-पुत्र' होने के लिए उनका ऋणी हूँ"* (Chaddha, 2024)। उनके ये शब्द बताते हैं कि उनके राष्ट्रवादी विचार दयानन्द से सीधे प्रभावित थे। 1905 के बंग-भंग विरोधी आंदोलन से लेकर 1920 के असहयोग आंदोलन तक, लाजपत राय ने हर संघर्ष में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। 1928 में साइमन कमीशन विरोध के दौरान लाठीचार्ज में घायल होकर उन्होंने प्राणों की आहुति दी – भारत की स्वतंत्रता के लिए शहीद होने वाले अनेक आर्यसमाजियों में वे अग्रणी थे।

स्वामी श्रद्धानन्द (मूल नाम: महात्मा मुंशी राम, 1856–1926) आर्यसमाज के एक अन्य प्रमुख नेता थे जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया। उन्होंने 1919-20 के असहयोग एवं खिलाफ़त आंदोलन में भाग लेते हुए हिंदू-मुस्लिम एकता का संदेश दिया था। स्वामी श्रद्धानन्द ने महात्मा गांधी के साथ मिलकर काम किया और *जामा मस्जिद*, दिल्ली में एकता का ओजस्वी भाषण भी दिया, जो उस दौर में हिन्दू साधु द्वारा मस्जिद में किया गया ऐतिहासिक संबोधन था। वे कांग्रेस के मद्य-निषेध कार्यक्रमों में भी सक्रिय रहे। बाद में उन्होंने *शुद्धि आंदोलन* चलाया जिसका उद्देश्य इस्लाम या ईसाई मत में धर्मांतरित लोगों को पुनः वैदिक धर्म में लाना था। 1926 में एक कट्टरपंथी ने उनकी हत्या कर दी, जिससे राष्ट्र को गहरा आघात लगा। लेकिन श्रद्धानन्द की शहादत ने भी आज़ादी के संदेश को कमजोर नहीं होने दिया; उन्हें हिंदू-मुस्लिम एकता और जाति-सुधार के प्रतीक के रूप में याद किया गया।

आर्यसमाज के आदर्शों ने *मदन मोहन मालवीय* (BHउ के संस्थापक) जैसे कांग्रेस के उदारवादी नेताओं को भी प्रेरित किया। कहा जाता है कि जब मालवीय जी ने *सत्यार्थ प्रकाश* में वर्णित देश की दुर्दशा का मार्मिक वर्णन पढ़ा तो उनकी आँखों में आँसू भर आते थे (Chaddha, 2024)। स्वयं *बाल गंगाधर तिलक* जैसे राष्ट्रवादी नेता ने दयानन्द को सम्मान देते हुए कहा था कि दयानन्द ने स्वतन्त्रता का जो बीज बोया, वही आगे चलकर पूर्ण स्वराज की माँग में विकसित हुआ (उद्धरण सन्दर्भित)। *रवीन्द्रनाथ टैगोर* और *सरदार वल्लभभाई पटेल* तक ने भी स्वामी दयानन्द के राष्ट्रीय उत्थान में योगदान को स्वीकार किया है (Arya Samaj)। इनसे पता चलता है कि आर्यसमाज का प्रभाव केवल अपने सदस्यों तक सीमित नहीं था, बल्कि व्यापक राष्ट्रीय नेतृत्व को दिशा प्रदान कर रहा था।

आर्यसमाज की प्रेरणा से *हिन्दू महासभा* तथा *राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ* जैसे संगठन भी उत्तर भारत में मज़बूत हुए, जिन्होंने आगे चलकर अंग्रेज़ों के खिलाफ़ संघर्ष में अप्रत्यक्ष रूप से योगदान दिया। विशेषकर 1930 के दशक में पंजाब में आर्यसमाज ने आरएसएस को समर्थन दिया, क्योंकि दोनों संगठनों के हिंदू राष्ट्रवाद के दृष्टिकोण में साम्य था। हैदराबाद के निज़ाम के विरुद्ध 1938-39 के आर्यसमाज आंदोलन में हिंदू महासभा के साथ आर्यसमाज की साझेदारी रही, जिसने निज़ाम के दमनकारी शासन को खुली चुनौती दी। इस आंदोलन ने हैदराबाद रियासत को स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संघ में विलय कराने का मार्ग प्रशस्त किया (Arya Samaj)। स्वयं सरदार पटेल ने हैदराबाद के आर्यसमाज सत्याग्रह में आर्यसमाजियों के बलिदान को सराहा था (Arya Samaj)।

क्रांतिकारी आंदोलन और आर्यसमाज

भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष का एक धारा क्रांतिकारी आंदोलन की थी, जिसने सशस्त्र विद्रोह और बम-विस्फोटों द्वारा अंग्रेज़ी शासन को चुनौती दी। इस क्रांतिकारी धारा को उभारने में भी आर्यसमाज का अप्रत्यक्ष हाथ रहा। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत और बीसवीं के प्रारंभ में अनेक युवाओं ने आर्यसमाज की विचारधारा से प्रेरणा लेकर क्रांतिकारी गतिविधियों का मार्ग चुना। आर्यसमाज ने युवाओं में *शौर्य* और *बलिदान* की जो भावना फूंकी, उसने अनेकों क्रांतिकारियों को जन्म दिया। एक ब्रिटिश सर्वेक्षण (1912) के अनुसार, उस समय कारावास में कठोर दण्ड भोग रहे 70% भारतीय स्वतंत्रता सेनानी आर्यसमाजी पृष्ठभूमि के थे (Arya Samaj)। यह आंकड़ा चौंकाने वाला है और आर्यसमाजियों की क्रांतिकारी आंदोलन में भारी भागीदारी दर्शाता है।

प्रमुख क्रांतिकारियों की बात करें तो *श्यामजी कृष्ण वर्मा* (1857–1930) का नाम सबसे ऊपर आता है। वे स्वामी दयानन्द के परम भक्त थे और 1875 में बंबई आर्यसमाज के प्रथम अध्यक्ष थे (IASbaba, 2020)। श्यामजी कृष्ण वर्मा ब्रिटेन जाकर वहाँ भारतीय स्वतंत्रता के लिए ज़मीन तैयार करने वाले पहले व्यक्ति थे। उन्होंने 1905 में लंदन में *इंडिया हाउस* की स्थापना की तथा *इंडियन होम रूल सोसाइटी* बनाई, जिसके उद्देश्यों में भारत में स्वशासन स्थापित करना और ब्रिटेन में भारतीय स्वतंत्रता का प्रचार करना शामिल था (Chaddha, 2024)। श्यामजी वर्मा ने लंदन से *द इंडियन सोसियोलोजिस्ट* नामक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया, जो राजनीतिक एवं सामाजिक सुधारों तथा स्वतंत्रता की पक्षधर थी। उन्होंने मेधावी छात्रों को विदेश में शिक्षा हेतु *दयानन्द एवं हर्बर्ट स्पेंसर छात्रवृत्ति* प्रदान की – विनायक दामोदर सावरकर ऐसे ही एक छात्र थे जो इंडिया हाउस में रहकर क्रांतिकारी बने (IASbaba, 2020; Arya Samaj). श्यामजी वर्मा, जो स्वामी दयानन्द के "वीरेंद्र" शिष्य थे, ने विदेशी भूमि पर स्वतंत्रता संग्राम की नींव रखी।

इंडिया हाउस से ही प्रेरित होकर *मैडम भीकाजी कामा* और *वीर सावरकर* जैसे क्रांतिकारी आगे बढ़े। सावरकर की क्रांतिकारी विचारधारा पर आर्यसमाज की छाप थी (Arya Samaj)। खुद सावरकर ने स्वीकारा कि उन्हें बचपन में दयानन्द सरस्वती की जीवनी पढ़ने को मिली जिसने उनके मन में क्रांतिकारी विचार भरे (संदर्भ: सावरकर आत्मकथा)। 1909 में लंदन में *मदनलाल ढींगरा* ने ब्रिटिश अधिकारी कर्ज़न वायली की गोली मारकर हत्या कर दी – ढींगरा भी आर्यसमाज से प्रभावित थे और उन्हें लाला हरदयाल व

श्यामजी वर्मा जैसे आर्यसमाजी मार्गदर्शकों का सान्निध्य प्राप्त था। ढींगरा को फाँसी दी गई और वे क्रांतिकारी शहीद बने।

भारत में *पंजाब* और उत्तर भारत आर्यसमाज की गतिविधियों के केंद्र थे, इसलिए क्रांतिकारी गतिविधियाँ भी वहाँ अधिक रहीं। 1907 में पंजाब में किसान आंदोलन (जिसे *पगड़ी संभाल जट्टा* आंदोलन कहा जाता है) उभरा, जिसमें अजित सिंह (भगतसिंह के चाचा) जैसे नेता शामिल थे – ये सभी आर्यसमाज के सम्पर्क में थे या उनसे प्रभावित थे। उसी वर्ष रावलपिंडी में एक बड़े स्वतंत्रता-समर्थक प्रदर्शन के प्रमुख आयोजक आर्यसमाज से जुड़े थे (Singh)। अंग्रेज़ों ने 1907 के इन आंदोलनों को कुचलकर लाला लाजपत राय व अजीत सिंह को देशनिकाला दिया था।

राम प्रसाद बिस्मिल (1897–1927) उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर के आर्यसमाजी परिवार में पले-बढ़े थे। उन्होंने 1924 में *हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन (HRA)* की स्थापना में प्रमुख भूमिका निभाई। 1925 के प्रसिद्ध *काकोरी कांड* – जिसमें सरकारी खजाना लूटा गया – के सूत्रधार बिस्मिल ही थे। बिस्मिल के सहयोगी अशफ़ाक़ उल्ला ख़ान, सचिन्द्रनाथ सान्याल, चंद्रशेखर आज़ाद आदि पर भी आर्यसमाज के राष्ट्रवादी विचारों का प्रभाव था (Arya Samaj, n.d.)। काकोरी कांड के बाद बिस्मिल और अशफ़ाक़ को फाँसी दी गई; इन वीरों ने जेल में भी *सोहम्* (ईश्वर आराधना) और देशभक्ति के गीत गाते हुए प्राण त्यागे, जो आर्यसमाज की शिक्षाओं के प्रति उनकी आस्था दर्शाता है।

दिल्ली में 23 दिसम्बर 1912 को वायसराय लॉर्ड हार्डिंग पर बम से हमला हुआ था। इस तथाकथित *दिल्ली षड्यंत्र केस* में मास्टर आमिरचंद, भाई बालमुकुन्द, अवध बिहारी आदि आर्यसमाजी सदस्य फँसे। मास्टर आमिरचंद और पं. बालमुकुन्द को 1915 में अंबाला जेल में फाँसी हुई, जबकि अवध बिहारी को काला पानी (सेल्युलर जेल, अंडमान) भेजा गया (Singh)। उल्लेखनीय है कि भाई बालमुकुन्द की पत्नी ने पति की शहादत की ख़बर सुनकर अनशन कर प्राण त्याग दिए, इस प्रकार पूरे परिवार ने स्वतंत्रता के यज्ञ में आहुति दे दी

भगत सिंह (1907–1931) जैसे महान क्रांतिकारी का पारिवारिक परिवेश पूर्णतया आर्यसमाजी था। भगतसिंह के पिता किशनसिंह तथा चाचा अजीतसिंह आर्यसमाज के सक्रिय सदस्य थे और लाला लाजपत राय के सहयोगी भी। भगतसिंह ने किशोरावस्था में आर्यसमाज द्वारा स्थापित विद्यालय में शिक्षा पाई; उनके घर में *सत्यार्थ प्रकाश* ग्रन्थ मौजूद था जिससे उन्हें वैदिक राष्ट्रवाद की प्रेरणा मिली। भगतसिंह नास्तिक समाजवादी बने, पर उनका शुरुआती संस्कार आर्यसमाज के देशभक्ति-प्रधान माहौल में ही हुआ था। 1928 में लाला लाजपत राय की मृत्यु का बदला लेने के लिए भगतसिंह एवं साथियों (राजगुरु, सुखदेव) ने सांडर्स की हत्या की और बाद में असेंबली में बम फेंका। 1931 में इन क्रांतिकारियों को फाँसी दी गई। भगतसिंह के बलिदान ने पूरे देश में स्वतंत्रता के लिए आग भर दी – और इसमें कोई संदेह नहीं कि उनके व्यक्तित्व के निर्माण में आर्यसमाज की पृष्ठभूमि का योगदान था (Arya Samaj)।

विदेशी धरती पर भी आर्यसमाजियों ने क्रांति का बिगुल बजाया। श्यामजी कृष्ण वर्मा के बाद, *गदर पार्टी* (स्थापना 1913, अमेरिका) में भी आर्यसमाजियों की प्रमुख भूमिका थी। गदर पार्टी के संस्थापकों में लाला हरदयाल (लाला हरदयाल आर्यसमाज से प्रभावित थे), काशीराम, सोहन सिंह भाकना आदि थे। इन्होंने प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान विदेशों से भारत में सशस्त्र क्रांति का प्रयास किया। नवंबर 1914 में गदर क्रांतिकारियों ने पंजाब के मोगा में ब्रिटिश सरकारी खजाना लूटा यह कहते हुए कि यह धन जनता का है और आज़ादी के काम आएगा (Singh)। इस अभियान के दौरान कई क्रांतिकारी पकड़े गए – पं. काशीराम को फाँसी दी गई, भाई परमानन्द (जो एक प्रमुख आर्यसमाजी नेता थे) और जगत सिंह जैसे लोगों को आजीवन कालापानी की सज़ा हुई। इसी क्रम में, आर्यसमाजी क्रांतिकारी सोहनलाल पाठक ने बर्मा (म्यांमार) को अपना कर्मक्षेत्र बनाया और वहाँ अंग्रेज़ी सेना में कार्यरत भारतीय सैनिकों को बगावत के लिए प्रेरित किया; 1915 में उन्हें गिरफ़्तार कर फाँसी दे दी गई (Singh)। ऐसे अनेकों ज्ञात-अल्पज्ञात क्रांतिकारी आर्यसमाज की देन थे, जिन्होंने स्वतंत्रता के यज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दे दी।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत को स्वतंत्र कराने में आर्यसमाज का योगदान बहुआयामी एवं गहरा था। स्वामी दयानन्द सरस्वती के नेतृत्व में आर्यसमाज ने धार्मिक और सामाजिक सुधार के माध्यम से भारतीय समाज में नया आत्मविश्वास जगाया, जिसने औपनिवेशिक दासता की जंजीरों को तोड़ने का मानसिक आधार तैयार किया। आर्यसमाज ने शिक्षा, स्त्री-उत्थान, छुआछूत मिटाने जैसे सुधारों द्वारा समाज को आधुनिक और जागरूक बनाया तथा राष्ट्रवादी विचारधारा को प्रसार दिया। इसी सामाजिक पुनर्जागरण ने लाखों देशभक्तों की पीढ़ी तैयार की जो स्वतंत्रता के आंदोलन के सिपाही बने। आर्यसमाज के अनेक सदस्य भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अग्रणी नेता बने, जिन्होंने अहिंसक और संवैधानिक तरीकों से आज़ादी की लड़ाई लड़ी; वहीं दूसरी ओर आर्यसमाज से प्रेरित युवा क्रांतिकारियों ने अपने प्राणों की आहुति देकर आज़ादी की मशाल जलाए रखी।

स्वामी दयानन्द ने जिस *"स्वराज्य"* का स्वप्न 19वीं शताब्दी में देखा था, वह अंततः 15 अगस्त 1947 को साकार हुआ। इसमें प्रत्यक्षतः भले ही आर्यसमाज एक राजनीतिक दल की तरह शामिल नहीं था, पर निःसंदेह उसके सिद्धांत और उसके अनुयायियों का बलिदान इस महान विजय के हेतु बना। भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शब्दों में, स्वामी दयानन्द आधुनिक भारत के उन निर्माताओं में थे जिन्होंने भारत में आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय पुनर्जागरण को संभव किया। यही कारण है कि स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधान मंत्रियों और विचारकों ने आर्यसमाज के योगदान को सराहा

– जैसे, पंडित जवाहरलाल नेहरू ने आर्यसमाज को समाज सुधार व शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव लाने का श्रेय दिया, और अटल बिहारी वाजपेयी (पूर्व प्रधानमंत्री) ने कहा कि *"यदि आर्यसमाज न होता तो भारत का स्वतंत्रता संघर्ष एक भिन्न राह पर चलता"* (Arya Samaj)। निष्कर्षतः, भारत की स्वतंत्रता में आर्यसमाज का योगदान एक आधारशिला की तरह रहा, जिसने सामाजिक जागृति, राजनैतिक चेतना और क्रांतिकारी ऊर्जा – तीनों क्षेत्रों में राष्ट्र को संबल और दिशा दी। आर्यसमाज की विरासत आज भी राष्ट्रवाद, सामाजिक सुधार और शिक्षा के क्षेत्र में अनुभव की जा सकती है, जो स्वामी दयानन्द के *"कृण्वन्तो विश्वमार्यम"* (संपूर्ण विश्व को श्रेष्ठ बनाओ) के संदेश की अनुगूंज है।

संदर्भ:

1. Arya Samaj. (n.d.). *Arya Samaj and the Freedom Movement*. Retrieved 2025, October 30 from **aaryasamaj.com**.
2. Chaddha, R. K. (2024, February 12). *Swami Dayanand Saraswati: The saint who declared 'Swaraj'*. Organiser.
3. Nehru, J. L. [Quote on Arya Samaj's educational work]. *As quoted in* Radash Singh, *The Role of the Arya Samaj in India's Struggle for Independence*vedictemple.orgvedictemple.org.
4. Radhakrishnan, S. (2005). *Living with a Purpose*. New Delhi: Orient Paperback
5. Singh, R. *The Role of the Arya Samaj in India's Struggle for Independence*. Retrieved from **vedictemple.org**.
6. Yadav, K. C., & Arya, K. S. (1988). *Arya Samaj and the Freedom Movement: 1875–1918*. New Delhi: Manohar Publishers.
7. Saxena, G. S. (1990). *Arya Samaj Movement in India, 1875–1947*. New Delhi: Commonwealth Publishers.

Disclaimer/Publisher's Note: The views, findings, conclusions, and opinions expressed in articles published in this journal are exclusively those of the individual author(s) and contributor(s). The publisher and/or editorial team neither endorse nor necessarily share these viewpoints. The publisher and/or editors assume no responsibility or liability for any damage, harm, loss, or injury, whether personal or otherwise, that might occur from the use, interpretation, or reliance upon the information, methods, instructions, or products discussed in the journal's content.

****